अथ संतप्रवर श्री स्वामी दादूदयालजी महाराज का

संक्षिप्त जीवन चरित्र

संतों को परब्रह्ममय जान रु शीश नमाय ।
चरित लिखूं श्री दादु का, पढ़त सुनत अघ जाय ॥ १ ॥
दादू चरित विशाल है, कविता मांहिं अनेक ।
अत: लिखूं संक्षिप्त अति, गद्य मांहिं यह एक ॥ २ ॥

ईश्वर निज इच्छा से समय २ पर जो लोक कल्याणार्थ संसार में महान् संतों के रूप में प्रकट होते रहते हैं। ऐसे ही महान् संत श्री दादूजी महाराज हुये हैं—अहमदाबाद नगर में लोधीराम नागर के पुत्र नहीं था, उसे पुत्र की बड़ी अभिलाषा थी, वह अपनी इच्छा पूर्ति के लिये सन्तों की सेवा करता रहता था। एक दिन उसे एक सिद्ध सन्त का दर्शन हुआ, उसने बड़े प्रेम से प्रणाम किया। सन्त प्रसन्न होकर बोले—जो इच्छा हो वही माँगो। लोधीराम बोला—और तो आपकी कृपा से सब आनन्द हैं; किन्तु पुत्र न होने से दु:खी हूं। संत ने कहा—तुम प्रात: साबरमती नदी पर स्नान करने जाते हो, वहाँ ही नदी जल पर तैरता हुआ एक बालक तुम्हें मिलेगा, उसे ही अपना पुत्र मान कर घर ले आना, वह महान् ब्रह्मज्ञानी होगा। सन्त के कथनानुसार वि. सं. १६०१ फाल्गुन शुक्ला अष्टमी गुरुवार को प्रात: काल पुनीत पुष्य नक्षत्र में अहमदाबाद में साबरमती नदी प्रवाह में कमल-दल समूह पर तैरता हुआ बालक मिला, उसे लाकर अपनी पत्नी को दे दिया। बालक को देख कर वात्सल्य प्रेम से उसके स्तनों में दूध आ गया । बड़े स्नेह से बालक का लालन-पालन होता रहा। बालक का अधिकतर अपनी वस्तु अन्य को देने का स्वभाव देखकर लोधीराम ने 'दादू' नाम रख दिया। जब वे एकादश वर्ष के हुये तब एक दिन तीसरे पहर सायंकाल से कुछ पहले बालकों के साथ कांकरिया तालाब पर खेल रहे थे। उसी समय भगवान् एक वृद्ध ऋषि के रूप में बालकों के पास ही प्रकट हुये। उन्हें देख कर अन्य बालक तो भाग गये किन्तु दादूजी ने पास जाकर बड़े प्रेम से प्रणाम किया और अपने पास से एक पैसा भेंट दिया। भगवान् ने कहा—इस पैसे की जो वस्तु प्रथम मिले वही ले आ। पहले पान की दुकान आई । दादूजी पान लेकर शीघ्र चले आये और भगवान् को समर्पण कर दिया। भगवान् उनके व्यवहार से बड़े प्रसन्न हुये और प्रसाद देकर कृपा-पूर्वक सिर पर हाथ रखा। उसी समय दादूजी के मुख से—''दादू गैब मांहि गुरु देव मिल्या, पाया हम परसाद। मस्तक मेरे कर धर्‍या, दक्ष्या अगम अगाध।'' यह साखी निकली थी। फिर भगवान् निर्गुण भक्ति का उपदेश देकर अन्तर्ध्यान हो गये ।

सात वर्ष के पश्चात् फिर भगवान ने दर्शन दिया और राजस्थान में जाकर निर्गुण भक्ति का प्रचार करने की आज्ञा दी। १९वें वर्ष में महाराज ने अहमदाबाद से राजस्थान के लिये प्रस्थान किया। आबू पहाड़ होते हुये मार्ग में ज्ञानदास-माणकदास को केदार देश का हिंसा से उद्धार करने

का आदेश दिया और पुष्कर होते हुये कुचामण रोड से दक्षिण लगभग १२ मील 'करडाला' ग्राम के पर्वत को अपना साधन स्थल चुना और लगभग १२ वर्ष वहां ही रहे। पर्वत के मध्य एक ककेड़े का वृक्ष था, उसके नीचे जाकर प्राय: ध्यानस्थ रहते थे। वहां अब छत्री बनी है। वहां की प्रेत-पहाड़ी में एक प्रेत रहता था, वह महाराज के पास आकर कुछ अपने चरित्र करने लगा, तब महाराज ने उस पर दया कर उसे मुक्त किया।

पीथा की चोरी छुड़ाई। उसने फिर रास देखने के निमित्त डाका डाला। तब वह माल माल-वालों को दिला कर उसे पर्वत शिखर पर महारास दिखाया। वह शिखर रास-स्थान के नाम से वहां प्रसिद्ध है। रास देख कर पीथा ने कहा—''गंग यमुन उल्टी बहे, पश्चिम उगे भान। पीथा चोरी ना करे, गुरु दादू की आन।'' करडाले से साँभर आये। वहां उनके उपदेश का प्रभाव देख कर हिन्दू तथा मुसलमान दोनों को ईर्ष्या हुई। उन्होंने तत्कालीन सरकार से ऐसा फरमान निकलवाया कि ''जो दादू के पास जायगा, वह ५००) रुपये दंड देगा।'' इस फरमान का प्रचार नगर में करवा दिया गया किन्तु फिर भी दो सेवक दर्शनार्थ दूसरे दिन चले गये। महाराज ने कहा—''तुम क्यों आये हो, तुम दोनों धनी हो, पाँच सौ रुपये दण्ड देने से तुम्हारा पैसा व्यर्थ सरकार में जायगा।'' उन्होंने कहा—''जब तक पैसा है, दण्ड देंगे और दर्शन करेंगे।'' उनकी दृढ़ श्रद्धा देखकर महाराज ने कहा—फिर पत्र को अच्छी प्रकार पढ़ कर दण्ड देना। आश्रम से बाहर आते ही राजपुरुषों ने उन्हें पकड़ लिया और कचहरी में ले गये। उन्होंने पत्र दिखाने को कहा, पत्र में लिखा मिला—जो दादू के पास न जायगा, उसे पाँच सौ रुपये दण्ड देना होगा। सब राज-कर्मचारी यह देखकर अवाक् रह गये और उन्हें छोड़ दिया। एक दिन एक काजी ने कहा—''तुम हिन्दू तथा मुसलमान दोनों धर्मों के विधान के अनुसार न चल कर इच्छानुसार चलते हो, यह ठीक नहीं, तुम काफिर हो।'' महाराज ने कहा—''जो मिथ्या बोले, वह काफिर होता है, चाहे कोई हो।'' इस पर काजी ने रुष्ट होकर महाराज के मुख पर मुक्का मारा। महाराज ने कहा—यदि तुम्हें मारने से प्रसन्नता है तो दूसरी ओर मार लो। उसने दूसरी ओर मारने को हाथ उठाया तब हाथ ऊपर ही रह गया, न मार सका और तीन मास के भीतर ही हाथ गल कर वह काजी मर गया। उसका जमाई उरमायल अजमेर में रहता था, उसने जब अपने श्वसुर की मृत्यु घटना सुनी तब वह रुष्ट होकर बोला—''मैं साँभर जाकर उस साधु को गले तक भूमि में गाड़ कर मुख के दोनों ओर मुक्के मारूंगा।'' वह रुई का व्यापारी था, जिस दिन महाराज के मुक्के मारने का विचार आया, उसी दिन रुई में बिना अग्नि ही अग्नि लग गयी और सात सौ मण रुई तथा उसकी स्त्री बाल-बच्चे जल कर नष्ट हो गये। उस घटना से वह डर गया, फिर महाराज को सताने नहीं गया। एक दिन महाराज बाहर से नगर में आ रहे थे, उसी समय वहाँ के शासकों ने उन पर मतवाला हाथी छोड़ा, मार्ग की जनता में हाहाकार मच गया किन्तु महाराज निर्भय रहे। हाथी ने आकर अपनी सूँड से महाराज के चरण छुये और प्रणाम करके लौट गया। एक दिन रात्रि के समय आश्रम में चोर घुसा और पुस्तकें उठाने लगा। संतों को ज्ञात हुआ तो परस्पर कहने लगे, बोलता नहीं है, अत: चोर ज्ञात होता है। महाराज ने शिष्य संतों को कहा—''हल्ला मत करो'' और चोर को कहा 'यहां से शीघ्र चला जा, विशेष जाग होने से तुझे राज-पुरुष पकड़ लेंगे और दु:ख देंगे।' चोर पर महाराज के वचन का बड़ा प्रभाव पड़ा, वह प्रात:

प्रसाद लेकर आया और महाराज के उपदेश से चोरी छोड़ कर ईश्वर भजन में लग गया। एक दिन प्रात:काल स्वामीजी पद गा रहे थे, वह काजी मुल्लाओं को अच्छा न लगा। उनकी आज्ञा से दस-बीस मुसलमान आये और महाराज को पकड़ कर विलन्दखान खोजा के पास ले गये। उसने महाराज को कैद की कोटड़ी में बंद कर दिया। उस समय विलन्दखान को तथा सब जनता को महाराज का एक शरीर कैद की कोटड़ी में और एक बाहर दीख रहा था। यह देखकर विलन्दखान चरणों में पड़ गया और क्षमा माँगी। दयालु संतजी ने क्षमा प्रदान की। उक्त चमत्कारों को देखकर लोगों ने एक साथ सात महोत्सव आरम्भ किये। सातों में एक ही समय पधारने का महाराज को निमंत्रण दिया। महाराज ध्यानस्थ रहे, किसी के भी नहीं गये। भगवान् ही महाराज के सात शरीर धारण करके सातों महोत्सवों में एक ही समय जा पहुंचे। तब से नगर-निवासियों की महाराज पर विशेष श्रद्धा हो गई किन्तु विट्ठल व्यास के चित्त में ऐसी फुरणा हुई कि पास जाऊं, तब दादू जी बिना हुई माला मुझे देंगे तो मैं समझूंगा, महान् संत हैं। व्यास के जाने पर इच्छानुसार माला मिल गई। जैसे मुकन्द भारती की भविष्यवाणी जो जयमल की माता को कही थी कि—मैं तेरे पुत्र को शिष्य नहीं बनाऊंगा, कुछ समय में संतप्रवर दादूजी महाराज प्रकट होने वाले हैं उन्हीं का यह शिष्य होगा, इससे साधकों को तो महाराज पर विश्वास था ही किन्तु साँभर की उक्त घटनाओं से महाराज की बड़ी ख्याति हो गई थी।

वृन्दावन के श्रेष्ठ संत चतुरा नागाजी ने भी अपने पास शिष्य होने को आये बड़े सुन्दरदासजी को महाराज का शिष्य होने का आदेश दिया था। महाराज की विशेषताओं को देखकर महाराज को अपने संप्रदाय में मिलाने के लिये गलता के महन्त ने माला तिलक देने को चार साधु सांभर भेजे थे किन्तु महाराज ने उन्हें कहा—"हमारा मन ही हमारी माला है, गुरु उपदेश ही तिलक है, मुझे माला तिलक नहीं चाहिये।" इस पर वे रुष्ट होकर बोले, यदि आमेर का राज्य होता तो हम अवश्य तुम्हें हमारे संप्रदाय में मिला लेते। महाराज ने कहा— ठीक है कभी आमेर राज्य में भी यह शरीर आ ही जायगा। फिर महाराज आमेर पधार गये। वहाँ के राजा तथा प्रजा के लोग भी महाराज के भक्त हो गये। महापंडित जगजीवनजी, रज्जबजी आदि शिष्य आमेर में हुये।

उन्हीं दिनों महाराज के शिष्य माधवदासजी घूमते हुये सीकरी जा पहुंचे और एक मंदिर में मध्याह्न के समय शयन कर रहे थे, निद्रा में पैर मंदिर की ओर हो गये। पुजारियों ने कहा—"तू बड़ा नामदेव बन गया है जो भगवान् की ओर पैर करके सोया है।" माघवदासजी ने कहा—"नामदेव ने क्या किया था ?" पुजारी बोले—भगवान् को दूध पिलाया था।" माघवदासजी ने कहा-भगवान् तो प्रेम होने से अब भी दूध पी सकते हैं। दूध लाया गया, माघवदासजी ने प्याला दीवाल की ओर किया। भगवान् ने दीवाल से मुख निकाल कर दूध पान किया। यह देख तुलसीराम ने अकबर को कहा—यह साधु दम्भी है इसे मार देना ठीक होगा। फिर उन्हें सिंह के पिंजरे में बन्द कर दिया। प्रात: जनता के लोग देखने आये, तो देखा कि सिंह डरा हुआ पिंजरे के एक कोने में बैठा है और सन्त मध्य में ध्यानस्थ हैं। अकबर स्वयं आया और पिंजरे से निकाल कर क्षमा माँगी। उस समय तुलसीराम ने कहा—इनके गुरु दादूजी इनसे भी अच्छे संत है, आमेर में विराजते हैं। अकबर ने आमेर नरेश भगवतदासजी को कहा—संतों को यहाँ बुलाओ, न आयेंगे तो हम वहां

चलेंगे। भगवतदासजी ने सूर्यसिंह खींची को आमेर भेजा। प्रथम तो महाराज ने ना कर दिया, किन्तु सूर्यसिंह ने कहा—''यदि आप न पधारेंगे तो मैं प्रायोपवेशन व्रत द्वारा यहीं शरीर छोड़ दूंगा।''

तब दादूजी ने नरहिंसा उचित नहीं जानकर अपने सात शिष्यों के साथ सीकरी को प्रस्थान किया, वहाँ पहुंचने पर भगवतदास बड़े सत्कार से अपने यहां ले गये और आतिथेय सेवा के बाद बादशाह को सूचना दी। फिर बादशाह की प्रार्थना से आतिशखाना नामक स्थान में रहे। बादशाह ने अब्बुलफजल, राजा बीरबल और तुलसीराम इन तीनों को कहा—तुम महाराज के पास जाओ। तुलसीराम ने आते ही कहा—''अकबराय नम:'' महाराज ने कहा—''नमो निरंजन आतमरामा''। फिर तीनों ने महाराज से अपने विचारों के अनुसार प्रश्न किये और महाराज के समाधान रूप विचारों से सन्तुष्ट हुये। बादशाह के पास जाकर महाराज की विशेषताएं बताईं। शेख अब्बुलफजल और राजा भगवत् दास के द्वारा महाराज को अकबर ने बुलाया और सत्संग किया। प्रतिदिन सत्संग होता रहा। फिर अकबर को ज्ञात हुआ कि-महाराज राज-अन्न नहीं खाते। कुछ लोगों ने कहा—किले के भीतर ठहरे हैं, भिक्षा को जावें तब द्वार बन्द करा दो, आप खायेंगे। वैसा ही किया। जग्गा जी भिक्षा को जाते थे, द्वार बन्द देखकर द्वारपाल को आवाज दी, न बोलने पर उन्होंने अपने योग बल से सब बात जान ली और अपना शरीर बढ़ा के दीवाल लांघकर भिक्षा ले आये। यह जानकर अकबर डर गया और आज्ञा दे दी कि संतों को अपनी इच्छानुसार ही रहने दो। अकबर ने चालीस दिन सत्संग किया, फिर महाराज को भेंट के रूप में विशाल धन राशि देने लगा तब महाराज ने मना कर दिया।

अकबर के पास एक कुरान पढ़ा हुआ तोता था, उसका पिंजरा रत्न जटित स्वर्ण का था। अकबर ने सोचा, महाराज तोता लेना स्वीकार कर लें तो पिंजरे का धन उनकी सेवा में जा सकता है, किन्तु उन्होंने अपने मन को ही तोता बता कर लेना स्वीकार नहीं किया। सेवा के लिये विशेष आग्रह करने पर ''गो-हिंसा बन्द कर दो यही हमारी सबसे बड़ी सेवा है।'' अकबर ने स्वीकार किया, यह देख कर वहाँ के काजी-मुल्लाओं ने अकबर से कहा—''आपने एक साधारण साधु के कहने से गो-वध बंद की आज्ञा दे दी है, उसकी कोई करामात तो देखी होती। अकबर ने उनके कहने से सभा में महाराज को बुलाया और बैठने के योग्य स्थान खाली नहीं रक्खा। महाराज उसके मन की बात जान गये और अपने योग बल से सभा के आकाश में तेजोमय सिंहासन रच कर उस पर विराज गये। यह देख कर सभी सभासदों को महान् आश्चर्य हुआ और बादशाह आदि सभी अपने-अपने आसन छोड़ कर प्रणाम करते हुये क्षमा माँगने लगे।

अकबर से बिदा होकर राजा बीरबल के रहे, उसे उपदेश करके आमेर नरेश भगवतदास के बुलाने पर उसके रहे, आमेर नरेश ने बड़े सत्कार पूर्वक सीकरी से विदा किया। वहां से विदा होकर सात दिन तक वन ही वन से आये। कारण, ग्रामों में जाने से जनता की भीड़ लगती थी। इस प्रकार चलते हुये एक दिन प्रात: काल दौसा के गेटोलाव तालाब पर प्रात:काल पहुंचे और शिष्य संतों को कहा—''स्नान कर लो।'' जग्गाजी ने कहा—''स्नान करा कर क्या गर्म जलेबी जिमाओगे।'' महाराज ने कहा—''जलेबी तुम्हारे लिये क्या दुर्लभ है, किन्तु तुम अपना काम तो करो, फिर

ईश्वर का काम वे आप करेंगे।'' सब संत स्नान करके भजन करने बैठे। भोजन के समय पर तालाब में एक छाब तैरती हुई दिखाई दी और महाराज के पास तट पर आ गई। सब संतों को गर्म जलेबी जिमाई, फिर भी बच गई, वह तालाब में ही छोड़ दी, कुछ दूर जाकर वह जल में डूब गई।

इस प्रकार घूमते हुये आमेर आ पहुंचे। आमेर में मार्ग के पास एक योगी रहता था, एक दिन महाराज और टीलाजी मार्ग से आ रहे थे। योगी बोला—''ए ! दादूड़ा ! आज कल कहां जाता आता है, अकबर के पास जाकर अपने को बहुत बड़ा मानने लगा है, किन्तु तुझ में कुछ भी शक्ति नहीं, तुझे तो मैं अभी आकाश में उड़ा सकता हूं।'' ''महाराज कुछ भी न बोले किन्तु टीलाजी ने कहा—जो कहता है वही उड़ेगा, इतना कह कर टीलाजी ने कहा—''उड़ जा शिला सहित।'' वह तत्काल उड़ गया। फिर करुणा पूर्ण शब्दों में महाराज से प्रार्थना की तब महाराज ने टीलाजी को कहा—'उतार दें।'' महाराज की आज्ञा मान कर उसे भूमि पर उतार दिया। योगी ने फिर चरणों में पड़कर क्षमा माँगी।

आमेर में एक तुर्क ने सत्संग सभा में मुख-बन्द मांस का पात्र इस भावना से लाकर रक्खा था कि महाराज पहचान जायेंगे तो मैं उन्हें उच्च कोटि का संत मानूंगा। महाराज उसकी बात को जान गये। उसे खोलने पर उसमें खांड भात निकला। आमेर में रहते हुये ही समुद्र में डूबती हुई व्यापारियों के एक जहाज को उनकी प्रार्थना योग-बल द्वारा जान कर तारी थी। धर्‌या जैमल नरेश और उसकी प्रजा की प्रार्थना पर योग बल से केदार (कच्छ) देश में देवी के मंदिर में प्रकट हुये। वहां के नरेश पद्मसिंह उस समय देवी की पूजा कर रहे थे। उन्होंने महाराज को बाहर निकालने की आज्ञा दी। महाराज का एक शरीर बाहर निकाला तो वहां दो शरीर खड़े हो गये, इस प्रकार ज्यों २ राज पुरुष निकालते थे, त्यों-त्यों दूने होते जाते थे। सब मंदिर महाराज के शरीरों से परिपूर्ण हो गया तब पद्मसिंह चरणों में पड़ गया और क्षमा माँगी। महाराज ने उसे अहिंसा का उपदेश किया, उसने स्वीकार किया और देवी को बलि देना बन्द कर दिया। इस प्रकार महाराज की कृपा से केदार देश अहिंसक बना। ज्ञानदास और माणकदास जी का प्रयत्न सफल हुआ।

आमेर में रहते हुये ही योगबल से हिमालय की भंभर घाटी में राजा बीरबल की महाराज ने हिम से रक्षा की थी। आमेर में ही गुफा के कपाट बन्द रहने पर भी दो सिद्ध सूक्ष्म शरीर बना गुफा में घुसे और महाराज के पास बैठ कर बात करने लगे कि जो काश्मीर में घोड़े दौड़ रहे हैं सो दादूजी को नहीं दीख रहे होंगे। उनके दूरदर्शन रूप दर्प को देख कर महाराज ने कहा—फिर बताओ अगले घोड़े के कान किस रंग के हैं ? सिद्ध न बता सके। महाराज ने कहा—''नीले कानों वाला घोड़ा आगे दौड़ रहा है।'' ऐसा, कह कर महाराज बोले-जब तक अपना आत्म स्वरूप ब्रह्म नहीं जाना जाय, तब तक दूर-दर्शनादि सिद्धियों से भव-बन्धन नहीं कटता। अत: परब्रह्म को जानने का यत्न करो। सिद्धजी महाराज का उपदेश स्वीकार करके चले गये।

टोंक निवासी नरहरिदास और माधवदासजी ने महोत्सव पर महाराज को आग्रहपूर्वक बुलाया था, उस समय अंधेरे बाग में संत-समूह एकत्र हुआ और संत दर्शनार्थ जनता भी अधिक आ गई थी। भोजन सामग्री कम पड़ने की बात माधवदासजी ने कही, महाराज ने कहा—''कोई चिन्ता नहीं, भगवान् के भोग लगाने का थाल यहां ले आओ।'' माधवदासजी ने वैसा ही किया।

महाराज ने भगवान् के भोग लगाया और थाल माधवदासजी को देकर कहा—''इसे भोजन राशि में मिला दो, कभी भी कम न होगा।'' वैसा ही हुआ।

साधु समाज का आग्रह था कि महाराज ही हम सबको प्रथम अपने हाथ से प्रसाद दें, तब ही जीमेंगे। माधवदासजी ने महाराज को कहा। महाराज ने कहा-ऐसा हो जायगा। फिर चार मुट्ठी लौंग लेकर महाराज ने अनेक शरीर धारण करके एक साथ सबको अपने हाथ से प्रसाद दे दिया। माधवदास जी ने पूछा-किसी को ५, किसी को ६ और किसी को ७ लौंग मिली हैं, यह क्या बात है[1] महाराज ने कहा-तीन प्रकार की श्रद्धा वाले लोग थे, जिनकी जैसी श्रद्धा थी उतनी ही लौंग उनको मिली है। ७ दिन तक टोंक में सत्संग होता रहा।

महाराज गुठले ग्राम को जा रहे थे, मार्ग बताने को कुछ बाल-भक्त भी साथ थे। मार्ग में गो मंडल मिला और महाराज को घेर कर खड़ा हो गया। प्रत्येक गाय महाराज को बारंबार प्रणाम करती थी, महाराज चलने लगते तो चलने लगती थी, खड़े रहने पर शीश नमाती थी। साथ के संतों को यह घटना देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। गो-यूथ का प्रेम देखकर महाराज ने उनको मुक्ति प्रदान की।

आँधी ग्राम के पूर्णदास आदि भक्त विशेष आग्रह करके महाराज को चातुर्मास में आँधी ले गये, वहां वर्षा न होने से जनता को व्यथित देख कर भगवान् से प्रार्थना करके वर्षा बरसाई। फिर पीथा के आग्रह से करडाले पधारे और पादू, रीवां, ईडवा आदि ग्रामों में भक्ति ज्ञानादिका उपदेश करते हुये मारवाड़ प्रदेश में पधारे। बीकानेर नरेश भुरटिये राव रायसिंह ने खाटू ग्राम में बुलाया। महाराज ने स्वीकार किया, किन्तु पीछे किसी मंत्री ने राव को बहका दिया, इस कारण राव को अश्रद्धा हो गई। महाराज के आने पर राव ने प्रश्न किये—आपका धर्म क्या है ? रहनी क्या है ? कर्त्तव्य क्या है, कथनी क्या है ? महाराज बोले-राम-नाम चिन्तन ही हमारा धर्म है, पांचों इन्द्रियों का संयम ही हमारी रहनी है, संतों ने जो किया है वही हमारा कर्त्तव्य है, और राम में वृत्ति लगाओ यही हमारा कथन है। राव ने कहा—यह ज्ञान नहीं, चतुराई है। महाराज शांति प्रिय थे, वे चुप रहे। फिर राव ने महाराज को मारने का षड्यंत्र किया। जहां महाराज ठहरे थे उस स्थान के मार्ग में मतवाला हाथी छोड़ दिया। हाथी को आते देख गरीबदासजी ने कहा—''इस मार्ग में षड्यंत्र ज्ञात होता है।'' महाराज बोले—''षड्यंत्रकारियों को उनके कर्म का फल मिलेगा और हमारी रक्षा निरंजन राम अवश्य करेंगे।'' गरीबदासजी तथा रज्जबजी बड़ी सावधानी से महाराज के साथ चल रहे थे। हाथी जब समीप आया तो रज्जबजी उसे हटाने के लिये आगे बढ़ना चाहते थे, किन्तु महाराज ने उनको रोक दिया। हाथी आया और मंत्रमुग्ध के समान खड़ा रह गया। फिर उसने सूंड से महाराज के चरण छूये, मस्तक नमाया। महाराज ने उसके सिर पर हाथ रक्खा, फिर वह हाथी शांतिपूर्वक लौट गया।

भुरटिये राव ने यह विचित्र घटना देखी, तब बहकाने वाले मंत्री को उलाहना दिया और श्रद्धापूर्वक महाराज के पास गया, सत्संग किया तथा अपने यहां ले जाने का आग्रह करके बोला—''संतों के स्थान, खानपानादि का प्रबन्ध मैं कर दूंगा आप सदा ही मेरे यहां रहा करें।'' महाराज बोले-हम तो एक परब्रह्म रूप राजा के ही आश्रित रहते हैं, अन्य राजाओं के आश्रित

नहीं । फिर उधर से अनेक ग्रामों में भक्तों को सत्-शिक्षा देते हुये नरेना में आये, मार्ग में जाते हुये बखना को होली गाते हुये देखकर कहा—''जिन भगवान् ने तेरा सुन्दर शरीर बनाया है, उनके गुण तो नहीं गाता और अपने पतन के कारण गंदे गीत गाता है, यह उचित नहीं।'' यह सुनते ही बखना चरणों में पड़ा और शिष्य बन गया। (बखनाजी बड़े प्रसिद्ध गायक भक्त हुए हैं। — सं.)

फिर अनेक भक्तों के यहां घूमते हुये घाटवा के लाडखानियों के आग्रह पर घाटवा पधारे । फिर प्रयागदासजी महाजन डीडवाने ले गये। वहां से किरडोली जाने लगे, तब बीच में ही आग्रह करके तिलोकशाह अपने ग्राम साहपुरा ले गये। बड़ी श्रद्धा से सेवा की किन्तु वहां से पधारते समय तिलोक के फुरणा हुई ? महाराज के विषय में बड़ी अद्भुत बातें सुनी जाती हैं किन्तु यहां पर तो कोई भी आश्चर्यकारक घटना नहीं घटी। महाराज उसके मन की बात जान गये और स्थान से बाहर जाकर बोले—''हम शरीर साफने का साफा छोड़ आये सो ले आओ।'' तिलोक लाने गया तो देखा वहां भी महाराज बिराज रहे हैं; उसने मार्ग की ओर देखा तो मार्ग में भी खड़े हैं। फिर साफा ले आया। महाराज ने कहा—''मेरी कमर के बाँध दो।'' बाँधने लगा तो गांठ तो आ जाय किन्तु कमर नहीं बँधे, यह देखकर तिलोक चरणों में पड़ गया। फिर महाराज उसे निष्काम भाव से संत सेवा करने का उपदेश देकर पधार गये। एक दिन अजमेर ख्वाजा पीर की दरगाह के पीर ने एक फकीर के हाथ एक दोने में मिश्री और फूल भेजे। उसने सामने रख कर सत्संग की बातें चलाई। आध घंटे में वे फूल और मिश्री बतासों के रूप में बदल गये। वे उस फकीर को प्रसाद रूप देकर विदा किया। संतों ने पूछा—भगवन्! यह क्या बात थी जो अपने आप फूल और मिश्री बतासे बन गये ? महाराज ने कहा—'वह मिश्री अपने काम की न थी और किसी का अपमान करना भी अच्छा नहीं, भगवत् कृपा से बतासे बन गये और उसे ही दे दिये।'' फकीर ने उक्त घटना पीरजी को कही, तब पीर भी श्रद्धापूर्वक महाराज के दर्शनार्थ गये और बोले—मैंने भूल की जो फकीर को भेजा, क्षमा कीजिये। महाराज ने उन्हें मधुर बचनों से हितकर उपदेश किया। वह संतुष्ट होकर लौट गये।

फिर विचरते हुये महाराज आल्हनवास आये और वहां से पादू गये। अल्लहण भक्त ने महाराज को आग्रहपूर्वक इसलिये रोका कि महाराज के सत्संग से लोगों को लाभ होगा किन्तु परशुरामजी के अनुयायियों ने लोगों को बहकाया, अत: वे सत्संग में सम्मिलित नहीं हुये। अल्लहण श्रीमान् न था, महाराज के साथ संत बहुत थे। उसने महाराज से कहा-''ग्राम के लोग दूसरों के बहकाने से भोजनादि का सहयोग नहीं दे रहे हैं।'' महाराज बोले-'तुम अपने घर का ही जिमाओ कोई कमी न आयेगी।'' फिर तो उसकी वस्तुयें अपार हो गईं, कोई भी कम न पड़ी। खूब आगत-अतिथियों तथा गरीबों को दिया जाता था। यह आश्चर्य देखकर ग्राम की श्रद्धा हो गई। अल्लहण ने महाराज के लिये कम्बली बनाई थी, जब वह भेंट दी तो महाराज ने कहा ''मुझे तो अभी आवश्यकता नहीं है।'' यह सुन कर अल्लहण को बड़ा दु:ख हुआ। तब भगवान् की आज्ञा हुई, कम्बली ग्रहण करो और अल्लहण को प्रसाद दो। महाराज ने भगवद्-आज्ञा के अनुसार ही किया, झारी जल प्रसाद देते ही अल्लहण की दिव्य दृष्टि हो गई। फिर महाराज वहां से विचरण कर गये ।

अल्लहण को परशुरामजी के अनुयायियों ने कहा-''दादू का मत अच्छा नहीं है, हमारा

मत अच्छा है, हमारी दीक्षा लो।'' अल्लहण बोला—सभी संतों का मत अच्छा है, फिर भी आपका आग्रह है तो यह दो मास की पाडी बैठी है, जो इसका दूध निकाल ले, उसी का मत अच्छा माना जायगा। परशुरामजी के अनुयायियों से न निकला। अल्लहण ने पाडी की पीठ पर थप्पी मार कर तथा 'सत्यराम' बोल कर पाडी का दूध निकाल कर चरी भर दी तब वे लज्जित होकर चले गये।

ईडवा ग्राम में दाँतुन के समय दूजन दासजी ने हरा दाँतुन लाकर दे दिया, तब महाराज ने कहा—''सूखे से भी दाँत साफ हो जाते हैं, तुम हरे वृक्ष को क्यों तोड़ लाये।'' फिर दाँतुन करके उसे पृथ्वी में गाड़ दिया, उसकी इमली ईडवा में अब तक है। फिर घूमते हुये बखनाजी के आग्रह से नरेना आये, तब वहां से ऊधवजी भैराना ले गये। मालवा के सिरौंज ग्राम में मोहनजी दफ्तरी ठहर रहे थे। एक दिन महोत्सव के समय भोग-थाल मोहनजी के पास आया तो उनके मन में संकल्प हुआ कि यह गुरुदेव पालें तो मेरा जन्म सफल हो जाय। महाराज आमेर में भोजन करने विराजे थे, टीलाजी थाल रसोई से लाने गये थे, लेकर आये तो आगे चौकी पर थाल रक्खा देख कर पूछा—थाल कहां से आया ? महाराज ने कहा—''सिरोंज से मोहन दफ्तरीजी ने भेजा है।'' महाराज ने भोजन किया और थाल सिरोंज को लौटा दिया। सिरौंज के भक्तों ने मोहनजी से पूछा—''थाल कहां गया था और कहां से आया ?'' मोहनजी ने कहा—गुरुदेवजी के पास आमेर गया था। महाराज ने तुम्हारा भोजन पाया है।

टहटड़ा में नागर-निजाम को सिद्ध पात्र दिया था। ऊंचा रख देने से इच्छानुसार भोजन आ जाता था। वहाँ से सेवकों के आग्रह पर दौसा पधारे और चौखाभूसर के पुत्र छोटे सुन्दरदास जी को अपना शिष्य बनाया। वहाँ से पुन: साँभर आये। यहां के भूधरदास वैरागी ने सोचा यह पहले के समान यहाँ न जम जाय, अत: यहां से मारपीट कर भगा देना चाहिये। अपने शिष्य को साथ लेकर एकान्त स्थान में महाराज के पास गया। वहां जाते ही शिष्य को उसके गुरु भूधरदास जी दादूजी के रूप में भासने लगे। इससे उसने गुरु को ही मारना आरम्भ कर दिया, गुरु ने कहा—''मैं तो तेरा गुरु हूं, मुझे क्यों मारता है।'' शिष्य बोला—''जैसा तू गुरु है वैसी ही तेरी पूजा कर रहा हूं।'' अन्त में गुरु अधमरा हुआ तब अपने रूप से भासा और महाराज अपने रूप में भासने लगे। अब तो वे दोनों समझ गये और चरणों में पड़कर क्षमा मांगी फिर वहां से करडाले पधारे।

उन्हीं दिनों महाराज के भक्त वणजारों ने मोरड़ा ग्राम के पास अपना पड़ाव डाला और करडाला से महाराज को अपने पड़ाव पर लाये तथा महान् उत्सव मनाया। महाराज ने भी उनको मुक्ति प्रदान की। वि. सं. १६५९ में जब भगवान् की आज्ञा ब्रह्मलीन होने की हुई तब शिष्य संतों के मन में कहीं धाम बनाने की इच्छा हुई। उनके मन की बात जानकर महाराज ने नरेना ग्राम के सरोवर तट पर धाम बनाना उचित समझा। नरेना नरेश नारायणसिंह दक्षिण में थे, उनके मन में भी फुरणा हुई-महाराज को नरेना लाकर सत्संग करना चाहिये। उन्होंने महाराज को बुलाया। वहां के विप्रों ने राजा से कहा, महाराज के यहां रहने पर तुम्हारा राज्य नहीं रहेगा, अत: उनको यहां मत रक्खो। किन्तु नरेश ने उनकी बात न मानी। महाराज तीन दिन रघुनाथ मंदिर में रहे, फिर ७ दिन त्रिपोलिया पर रहे। राजा सत्संग करने प्रतिदिन जाते थे। आठवें दिन जहां महाराज का आसन था, वहां एक महान् सर्प ने प्रकट होकर अपने फन से तीन बार

वहां से उठने का संकेत किया। महाराज भगवान् की आज्ञा मानकर उसके पीछे पीछे चल पड़े। एक खेजड़े के नीचे जाकर सर्प ने फन से वहां ही विराजने का संकेत किया तो महाराज वहां ही विराज गये। वह खेजड़ा अभी तक विद्यमान है।

वहां तालाब के तट और बाग के बीच एक मास में धाम तैयार हो गया। वहीं फिर एक दिन भूतकाल के संत पधारे और रात्रि को ब्रह्म विचार होता रहा। प्रात: टीलाजी ने पूछा-बाहर से तो कोई आया नहीं और रात्रि को आपके पास कई महानुभावों के वार्तालाप के शब्द सुनाई दे रहे थे, क्या बात थी ? महाराज ने कहा—भूतकाल के संत नभ-मार्ग से आये थे और नभ-मार्ग से ही चले गये।''

अन्त समय गरीबदासजी ने प्रश्न किया-स्वामिन् ! आपने ऐसा मार्ग दिखाया है जो हिन्दू मुसलमानों की सीमित सीमा से आगे का है। किन्तु इसका आगे कैसे निर्वाह होगा ? महाराज ने कहा-तुम ऐसा विचार मत करो, जो अपने धर्म में रहेंगे उनकी रक्षा राम करेंगे, और तुम विशेष चाहो तो हमारा शरीर रख लो, जो भी पूछना चाहोगे उसी का उत्तर इससे मिलता रहेगा ? तथा ऐसा भी न समझो कि-वह शरीर खराब हो जायगा, यह पंच तत्त्व से बना हुआ नहीं है, यह तो दर्पण में प्रतिबिम्बित शरीर के समान है। यदि तुम्हारे संशय हो तो हाथ फेर कर देख लो।'' गरीबदासजी ने हाथ फेरा तो दीपक ज्योति-सा प्रतीत हुआ। दीखता तो था किन्तु पकड़ने में नहीं आता था। फिर गरीबदासजी ने कहा-जब आपने ऐसा देह बना लिया तो कुछ दिन इसे और रखने से तो हम शवपूजक कहलायेंगे जो आपके उपदेश के अनुसार उचित नहीं।'' महाराज बोले 'तो फिर यहां एक बिना तेल-घृत और बत्ती के अखंड-ज्योति रहेगी उससे तुम्हारे सभी कार्य सिद्ध होते रहेंगे।'' गरीबदासजी ने कहा उस ज्योति के महान् चमत्कार को देखकर यहां जनता का अधिक आना जाना रहेगा जो हमारे साधन में पूर्ण विघ्न बनेगा, हम पंडे बन जायेंगे, अत: यह भी ठीक नहीं है।'' गरीबदासजी की निष्कामता देखकर महाराज प्रसन्न हुये और बोले ''जो हमारी वाणी का आश्रय लेकर निर्गुण भक्ति करेंगे, उनकी परब्रह्म रक्षा करेंगे और जो इष्ट-भ्रष्ट होगा, उसे परम पद नहीं मिलेगा।'' गरीबदासजी ने फिर पूछा ''स्वामिन्। आपको भविष्य का सब वृत्तान्त करामलकवत् ज्ञात है, अत: बताइये फिर भी कोई उत्तम भक्ति करने वाला संत आपके समाज में होगा या नहीं ? महाराज ने कहा—सौ वर्ष पीछे एक संत होगा।'' (वे ही श्री जयत साहब जी महाराज हुये, ऐसा संतों से सुनते आ रहे हैं)

ब्रह्मलीन होने से पूर्व महाराज ने सब संतों को बुलाया और दर्शन देकर तथा स्नान करके स्थान पर विराज गये। उस समय भगवान् की तीन बार आज्ञा हुई कि आओ३। तीसरी आज्ञा के साथ ही महाराज ने अपना देह त्याग दिया। वि. सं. १६६० ज्येष्ठ कृष्णा ८ शनिवार को एक पहर दिन चढ़े उक्त प्रकार से महाराज ब्रह्मलीन हुये। फिर एक सुन्दर पालकी में शरीर को रखकर महाराज की आज्ञानुसार संकीर्तन करते हुये भैराना गिरि पर ले गये। यहां पालकी ले जाकर रख दी। फिर अन्त्येष्टि संस्कार सम्बन्धी विचार कर रहे थे कि उसी समय टीलाजी को गिरि के मध्य भाग की गुफा के द्वार पर महाराज के दर्शन हुये। टीलाजी ने सबसे कहा, सबने दर्शन किये। इतने में ही महाराज-'संतो ! सत्यराम'' यह बोल कर अन्तर्ध्यान हो गये और पालकी में शरीर के स्थान

पर पुष्प मिले। कहा भी है: ''गुरु दादू रु कबीर की, काया भई कपूर। रज्जब अज्जब देखिया, सगुण हि निर्गुण नूर॥'' फिर गरीबदासजी ने महान् महोत्सव किया। इस प्रकार महाराज ५९ वर्ष २॥ मास धरातल पर रह कर लोक कल्याणार्थ उपदेश करते रहे और १५२ शिष्य करके ब्रह्मलीन हुये।

सौ शिष्यों ने केवल निरंजन राम का भजन ही किया और ५२ प्रचारक हुये तथा थाभांयती महन्त कहलाये। उनमें अधिकतर बाणीकार हुये हैं। ५२ के नाम और स्थान निम्न प्रकार है :-

दादूजी दयालु पाट गरीब मसकीन ठाट, युगल बाई निराट निराने विराज ही।
बखनो संकर पाक जैसो चांद प्रागटांक, बड़ोहु गोपाल ताके गुरु द्वारे राज ही॥
सांगानेर रज्जब सो देवले दयालदास घड़सी कडेल बसी धर्म ही की पाज ही।
ईडवे दूजनदास तेजानन्द जोधपुर, मोहन सो भजनीक आसोप निवाज ही॥१॥
गूलर में माधोदास विद्याद में हरिसिंह, चत्रदास सिंघ्रावट किये तन काज ही।
विहाणी प्रयागदास डीडवाणे है प्रसिद्ध, सुंदरदास भूसर सु फतेपुर गाज ही॥
बाबा बनवारी हरिदास दोऊ रतिया में, साधुराम मंडोठी में नीके नित्य छाज ही।
सुन्दर प्रहलाददास घाटड़े सु छीण मांहि, पूरब चतुरभुज रामपुर राज ही॥२॥
निराणदास मांगल्यो सु डांग मांहि एकलोद रणतभंवरगढ चरणदास जानियो।
हाड़ोती गंगाइचा में माखूजी मगन भये, जग्गोजी भड़ूंच मध्य प्रचाधारी मानियो॥
लालदास नायक सो पीरांणी पटणदास, फोफले मेवाड़ माँहि टीलोजी प्रमानियो।
सादा प्रमानन्द दोउ ईंदोखली रहे जप, जयमल चौहांण सो खालड़े हरि गानियो॥३॥
जैमल जोगी कछावो वनमाली चोकन्यों सु, सांभर भजन रूप सो वितान तानियो।
मोहन दफ्तरी सो तो मारोठ चिताई भले, रघुनाथ मेड़ते सु भाव कर आनियो।
कालेडेरे चत्रदास टीकूदास नांगल में, झोटवाड़े झांझूमांझू लघु गोपाल धानियो।
आमावती जगन्नाथ राहोरी में जनगोपाल, बारा हजारी संतदास चांवड़े लुभानियो।४।
आंधी में गरीबदास भानगढ़ माधव के, मोहन मेवाड़ा जोग साधन से रहे हैं।
टहटड़े में नागर निजाम हूं भजन कियो, दास जगजीवन सु दौसा हरि लहे हैं॥
मोहन दरियाई सो समाधी नागर चाल मध्य, बोकड़ास संत जु हिंगोल गिरि भये हैं।
चैनराम कांणोता में गोंड़ार कपिलमुनि श्यामदास झालाणा में चौड़ा का में ठये हैं॥५॥
सौंक्या लाखा नरहर आलूदे भगति कर, महाजन खंडेलवाल दादू गुरु गहे हैं।
पूर्णदास ताराचंद महाजन महरवाल, आंधी में भगति कर काम क्रोध दहे हैं।
रामदास राणीबाई क्रांजल्यां प्रकट भये, महाजन डंगायच सो जाति बोल सहे हैं॥
बावन ही थांभा अरु बावन ही महन्त ग्राम, दादू पंथी राघोदास सुने जैसे कहे हैं॥६॥

महाराज ने भक्तों को जो उपदेश किये हैं उन्हीं का संग्रह वाणी में है। महाराज का विस्तृत पद्यमय चरित्र श्री लक्ष्मीराम चिकित्सालय, सांगानेर दरवाजा, जयपुर में उपलब्ध है।

चरितामृत श्री दादु का यह संक्षिप्त स्वरूप। पढ़े प्रेम से देत हैं, मन बल परम अनूप।
ब्रह्म रूप श्री दादू को बारंबार प्रणाम। 'नारायण' के चित्त को, दें संतत विश्राम॥

ले.-संतकवि कविरत्न स्वामी नारायणदास श्री कृष्ण कृपा कुटीर, पुष्कर

श्री वाणी प्रार्थना पञ्चदशी

शिष्येभ्य: प्रतिबोधितां शमदमश्रद्धादिमद्भ्य: स्वयं
श्रीदादूगुरुभिर्दयाद्रहृदयैरंशावतारै: प्रभो ।
शुद्धब्रह्मविचारसाधनपरां मायाभ्रमोच्छेदिनीं
शिष्यत्वेन भजाम्यहं गुरुमिवं श्रीदादुवाणीमहो ॥ १ ॥
सुधाधारासारै: प्रवचनघनान्तविगलितै—
र्जनानां सिञ्चन्ती हृदयमतिशान्तिप्रजननै: ।
महाकालज्वालापतितजनसन्तापशमनी
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ २ ॥
गुरोराशीर्वादात् मनुजजनिसाफल्यकरणै–
र्हृषीकेश–ध्यानस्मरण–मननाभ्यास–विधिभि: ।
स्वभक्तानां नित्यं परमपुरुषार्थं विदधती
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ३ ॥
समुद्दीप्यास्माकं हृदयपटले स्नेहबहुले
परब्रह्म–प्रेमानलमखिल—पापप्रदहनम् ।
प्रशस्तीकुर्वाणा परमप्रभुसायुज्यपदवीं
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ४ ॥
भ्रमन्तं संसारे चिरतरवियुक्तं प्रियतमात्
परब्रह्मस्थानात् परमपरमानन्दविभवात् ।
नयन्ती भूयोऽपि स्वभवनमिमं जीवनिवहं
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ५ ॥
महारण्ये भ्रष्टं जगति भयभीमेऽतिविषमे
गृहीत्वा हस्ताग्रं शिशुमिव रुदन्तं नरमिह ।
निविष्टं कुर्वाणा परमपितुरंके पुनरपि
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ६ ॥
इमं जीवात्मानं प्रियतमपरात्मानमभित:
प्रतिष्ठां प्रापय्य प्रियतमकराग्रेण मधुरम्।
परब्रह्मानन्दामृतचषकपानं प्रदिशती
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ७ ॥
अनादे: कालाद् वै चिरविरहिणोर्जीवशिवयो:
पुनर्योगं कृत्वा सरलसरलोपायविधिभि: ।

मिथ: प्रेमक्रीडोत्सवसुखरसास्वादनचणा
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ८ ॥
अमुष्मिन् वै मायामयचमचमत्कारपिहिते
प्रपञ्चे प्रच्छन्नं सकलरमणीयं शिवतमम् ।
परं सत्यं साक्षात् नयनगमनीय विदधती
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ९ ॥
प्रभुप्रेयोऽस्माकं भवति खलु नि:श्रेयस्कर:
तत: श्रेयस्कामै: सततमवधेयं प्रभुप्रियम्
इति श्रेयोमार्गानुगमनसुशिक्षावितरणी
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ १० ॥
कथं मायामोहो विलयमुपनेयो मतिमतां
चलं चैतच्चित्तं कथमथ विधेयं प्रभुपदे ।
तदित्थं कल्याणोत्तमविधिविधानं विदधती
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ ११ ॥
पशुत्वात् मानुष्यं मनुजपदत: सिद्धपदवीं
सुसिद्धाद् देवत्वं तदनु च परब्रह्मपदवीम्।
प्रदातुं सर्वेभ्य: सततकटिबद्धा सहृदया
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ १२ ॥
यमन्वेष्टुं तीर्थप्रभृतिबहिरङ्गेषु बहुशो
भ्रमन् व्यर्थं लोक: समयमथ शक्तिं गमयते ।
महेशं तं स्वान्तर्हृदयभवने दर्शनपरा
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ १३ ॥
पवित्रीकर्तव्यैर्यमनियमसंस्कार विधिभि–
र्दयादानौदार्य—प्रभृतिभिरनेकैर्गुणगणै: ।
जनानां चारित्र्येष्वभिनवपरिष्कारकुशला
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ १४ ॥
अहो तत्तद्रागोन्नयननिपुणैरप्यतितरां
पदैर्गीतैर्गीतैर्भवविषय—वैराग्य—जननी ।
विरक्तानां भक्तौ रसिकमनसां प्रीतिनयनी
गुरूणां वाणीयं परमसुखशान्तिं वहतु मे ॥ १५ ॥

— स्वामी बलराम: शास्त्री प्राचार्य:

अथ विषय सूची

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
श्री गुरुदेव का अंग	१	साक्षीभूत का अंग	४६३
स्मरण का अंग	३३	बेली का अंग	४६६
विरह का अंग	५८	अविहड़ का अंग	४६९
परिचय का अंग	८८	**शब्द भाग**	
जरणा का अंग	१५९	राग गौड़ी	४७९
हैरान का अंग	१६६	राग माली गौड़	५१८
लै का अंग	१७२	राग कल्याण	५२७
निष्काम पतिव्रता का अंग	१८१	राग कन्हड़ा	५२८
चेतावनी का अंग	१९९	राग अडाणां	५३२
मन का अंग	२०२	राग केदार	५३६
सूक्ष्म जन्म का अंग	२२६	राग मारू	५५०
माया का अंग	२२८	राग रामकली	५६४
सांच का अंग	२६०	राग आसावरी	५९४
भेष का अंग	२९०	राग सिन्दूरा	६११
साधु का अंग	२९९	राग देवगान्धार	६१७
मध्य का अंग	३२०	राग कालिंगड़ा	६१९
सारग्राही का अंग	३३१	राग परजिया	६२०
विचार का अंग	३३५	राग भाणमली	६२१
विश्वास का अंग	३४५	राग सारंग	६२३
पीव पिछान का अंग	३५४	राग टोडी	६२६
समर्थता का अंग	३५९	राग हुसेनी बंगाल	६३६
शब्द का अंग	३६७	राग नट नारायण	६३७
जीवत मृतक का अंग	३७२	राग सोरठ	६४१
सूरातन का अंग	३८१	राग गुंड	६५०
काल का अंग	३९६	राग विलावल	६६३
सजीवन का अंग	४१०	राग सूहा काया बेलि ग्रंथ	६७६
पारिख का अंग	४१८	राग वसंत	६९१
उपजन का अंग	४२५	राग भैरूं	६९६
दया निर्वैरता का अंग	४२८	राग ललित	७१५
सुन्दरी का अंग	४३४	राग जैतश्री	७१८
कस्तूरिया मृग का अंग	४३८	राग धनाश्री	७१९
निन्दा का अंग	४४१	आरती, गुरूमंत्र,	
निगुणा का अंग	४४४	रामरक्षा मंत्र, भोगविधि	७४०
विनती का अंग	४४९	साखी भजन प्रतीक सूची	७५२

॥श्री॥

श्री दादूवाणी माहात्म्य

श्री दादूवाणी की महा महिमा कही न जाय। पद पद में अनुभव किये, श्रुति सिद्धान्त सुहाय॥
ब्रह्म रूप अहि ब्रह्मवित्, जाकी वाणी वेद। भाषा अथवा संस्कृत, करत भेद-भ्रम छेद॥
वाणी जाकी वेद सम, कीजे ताकी सेव। ह्वै प्रसन्न जब सेवतैं, तब जानें निज भेव॥
वाणी दादू दयाल की, सब शास्त्रन को सार। पढ़ें विचारें प्रीति सूं, ते जन उतरें पार॥
दादू दीन दयालु की, वाणी बिसवा बीस। तिनकूं खोजि विचार कर, अंग धरे सैंतीस॥
तिन मांहीं जो हारड़ै, तिनके तिते स्वरूप। को विवेकी केलवै, काढै अर्थ अनूप॥
दादू दीन दयाल की, वाणी कंचन रूप। कोइ एक सोनी संतजन, छड़ि है घाट अनूप॥
दादू दीन दयालु की, वाणी अनुभव सार। जो जन या हिरदै धरै, सो जन उतरै पार॥
जे जन पढ़ें जु प्रीति सूं, उपजै आतम ज्ञान। तिनकूं आन न भास ही, एक निरंजन ध्यान॥
जिनके या हिरदै बसी, याही में मन दीन। तिनकूं अति मीठी लगी, आठ पहर लौ लीन॥
वेद पुराण व शास्त्र सब, और जिते जो ग्रन्थ। तिनको बोधि विलोकि के, यह काढ्या निज मंथ॥
बोले दादूदास जी, साचे शब्द रसाल। तिनकी उपमा को कहै, मानो उगले लाल॥
या वाणी सुनि ज्ञान ह्वै, याही तें वैराग। भक्ति भाव यासें बढ़ै, या सुनि माया त्याग॥
या वाणी पढि प्रेम ह्वै, या पढि प्रीति अपार। या पढि निश्चय नाम ह्वॅ, या पढि प्राण अधार॥
या वाणी ह्वै खोजतां, क्षमा शील संतोष। याहि विचारत बुद्धि ह्वै, या धारत जिव मोक्ष॥
आदि निरंजन अन्त निरंजन, मध्य निरंजन आदू। कहि जगजीवन अलख निरंजन, तहां बसै गुरु दादू॥
कथी स्वामी दादू प्रति पद महा मोह दमनी। जिन्हें निश्चय कीन्हीं, भव निधि तरे दुःख शमनी॥
कहो को न जानी, सुखतर भये सन्त सब ही। पढै जो या वाणी निशिदिन लहै ब्रह्म तब ही॥
जिनकी वाणी अमृत बखानी सन्तन मानी सुखदानी। जो सुनकर प्राणी हिरदै आनी, बुद्धि थिरानी उन जानी॥
यह अकथ कहानी प्रगट प्रवानी नाहिं न छानी गंगा सी। गुरु दादू आया शब्द सुनाया ब्रह्म बताया अविनाशी॥
जाकी वाणी पढत बढत मन राम हिम, हिय होत अनुभूति अलख अमल की।
जीव जीवभाव तज ब्रह्म को स्वरूप होत, रहे नहीं रेख भी अविद्यामय मल की॥
जिनकी शरण भवतरणि विख्यात भली, कट जाती झट पाश मोह माया बल की।
नारायण वारी बलिहारी जाऊं बार-बार, परम दयालु दादू चरण-कमल की॥
यदी या वाण्येषा ह्यमृत-रस-पूर्णा श्रमहरा। श्रुता यै: प्रीत्येयं विशदयति तेषां मतिमलम्॥
पुमांस्तां गायन् वै व्रजति भवपारं सुखतरम्। नमामस्तं दादूं प्रणत-जन-वृन्दार्चित-पदम्॥

श्री दादूवाणी जी की आरती

ओऽम् जय दादूवाणी।
मुनिजन की मनभावनि, सन्तन सुखदानी ॥ टेक ॥ ॐ जय.
वेद शास्त्र से सम्मत, सतगुरु की वाणी ।
भक्ति वैराग्य उपावनि, करती ब्रह्मज्ञानी ॥ १ ॥ ॐ
अविचल अमर अखंडित परमानंद भरणी ।
निर्गुण नाम निरंजन, सुमिरण अनुसरणी ॥ २ ॥ ॐ
आपा गर्व मिटावनि, हरि भक्ति जननी ।
सबसे स्नेह बढ़ावनि, तन मन अघ हननी ॥ ३ ॥ ॐ
विषय वकार विनाशिनि, निर्मल मन करणी ।
तीनों ताप नशावनी, भव दु:ख भय हरणी ॥ ४ ॥ ॐ
आतम ज्योति जगावै, भ्रम तम विनशानी ।
माया मोह भगावै, ब्रह्म ही दरशानी ॥ ५ ॥ ॐ
काया मांहिं दिखावै, प्रभु सारंग-पाणी ।
जाहि निरन्तर ध्यावैं, सुरनर मुनि ज्ञानी ॥ ६ ॥ ॐ
उपदेशामृत पूर्णा, श्री दादू वाणी ।
प्रेम सहित जो धारै, अमर हुवै प्राणी ॥ ७ ॥ ॐ
श्री गुरु दादू दयालु कृत अनुभव वाणी ।
अधम उधारण 'स्वामी', श्री मुख प्रगटानी ॥ ८ ॥ ॐ

वन्दना

जिन मनोभाव से ही मेट दियो विद्यावाद, जगा जगजीवन में भक्ति की मशाल को।
जाकी नैन-सैन ने छुड़ाय कर भिक्षावृत्ति, भक्ति की सद्‌वृत्ति दीनी सु जनगोपाल को॥
जाके एक बैन से ही रज्जब विरक्त भये, बखनो गावन लागो भक्ति की धमाल को।
पद पंकज की रज परसे गौ गज मुक्त, 'नारायण' वन्दौं ऐसे दादूजी दयाल को॥

- रचयिता - मा. नारायण स्वामी, निवाई महन्तों का बाग, जयपुर-४

अथ मंगलाचरण

दादू नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवत: । वन्दनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ।।
परब्रह्म परापरं, सो मम देव निरंजनम् । निराकारं निर्मलं, तस्य दादू वन्दनम् ।।
श्वेताम्बर धरं स्वामी, नूरतेज सुधामयम् । श्री दयालु दया कृत्यं, सर्व विघ्न विनाशनम् ।।
जो प्रभु जग में ज्योतिमय, कारण करण अभेव । विघ्न हरण मंगल करण, श्री नमो निरंजन देव ।।
विघ्न बचे हरिनाम सों, व्याधि विकार विलाय । ऐसा शरणा नाम का, सब दु:ख सहजैं जाय ।।
सदा हमारे राम जी, गुरु गोविन्द जी सहाय । जन रज्जब जोख्यू नहीं, विघ्न विलय हो जाय ।।
दादू दीन दयाल गुरु, सो मेरे सिरमौर । जन रज्जब उनकी दया, पाई निहचल ठौर ।।
रज्जब शिष दादू गुरु, दीया दीरघ ज्ञान । तन मन आत्म ब्रह्म का, समझ्या सबहि स्थान ।।
दादू दीन दयालु सा, नजर न आया कोय । घड़सी सारी मांड में, करता करै सु होय ।।
स्वामी दादू ब्रह्म है, फेर सार नहीं कोय । सुन्दर ताको सुमिरतां, सब सिध कारज होय ।।
स्वामी दादू सुमिरिये, गहिये निर्मल ज्ञान । मनसा वाचा कर्मणा, सुन्दर धरिये ध्यान ।।
स्वामी दादू सुमिरिये, निशिदिन हिरदै राखि । सुन्दर जब लग जीविये, तब लग और न भाखि ।।
स्वामी दादू सुमिरिये, हिरदै होय प्रकाश । सुन्दर सब कारज सरै, पूरै जीव की आश ।।
स्वामी जी शिर ऊपरै, स्वामी जी उर मांहि । स्वामी दादू सारिसा, सुन्दर दूजा नाहिं ।।
साहिब दादू एक है, अन्तर नाहीं रेख । परमारथ को वपु धरया, अन्त एक का एक ।।
'दा' कहतां दारिद मिटै, 'दू' कहतां दु:ख जाय । ''दादू दादू'' जे रटैं, आवागमन नशाय ।।
दाह जिती है जीव की, दू कहतां भई दूर । ऐसे दादू देव हैं, रहिये सदा हजूर ।।
''दादू दादू'' जे कहैं, तिन को काल न खाय । पार ब्रह्म दादू भया, ताहि रहो ल्यौलाय ।।
गुरु दादू चन्दा भया, सन्तन भये चकोर । ध्यान धरत ता नूर का, तहां बसै मन मोर ।।
नारायण सब विघ्न निवारे, परमेश्वर सब पीरा । आटे घाटे गोरख राखै, जहां जहां दास कबीरा ।।
काल झाल थैं दादू राखै, ऐसा गुरु गंभीरा । सभी सन्त सहायक भये, जगिया गोविन्द नेरा ।।
हरि बायें हरि दाहिने, हरि आगे हरि पीछ । टीला तूं काहे डरे, चल्यो जाय हरि बीच ।।
टीला के साथी दो जनां, गुरु दादू अरु राम । वह है दाता मुक्ति का, वह सुमिरावै राम ।।
सेवक की रक्षा करै, सेवक की प्रतिपाल । सेवक की वाहरै चढै, श्री दादू दीनदयाल ।।
नमस्कार सुन्दर करत, निशिदिन बारंबार । सदा रहो मम शीश पर, सतगुरु चरण तुम्हार ।।
भक्त कहा जोगी जती, षट् दर्शन विश्राम । जगन्नाथ जगदीश को, भजै ताहि प्रणाम ।।

श्री दादूवाणी जी की आरती

ॐ जय दादू दयालु गिरा, जय गुरु दादू दयालु गिरा ।
माधव के मन भावनि, भव भय सतत हरा ॥ॐ।१॥
जो गावे, सुख पावे, क्लेश हटे हिय का ॥
शम दमादि मन आवे, क्षौभ मिटे जिय का ॥ॐ॥२॥
काम क्रोध मद भंजनि, लोभ मोह हननी ॥
साधक जन मन रंजनि, शांति क्षमा जननी ॥ॐ॥३॥
संशय शोक नशावति, कहती हरि साथा ॥
श्रुति सिद्धान्त सुनावति, तारति भव पाथा ॥ॐ॥४॥
भेद विवाद मिटावनि, समता सुख-कारी ॥
पक्ष विपक्ष नशावनि, विषयाशाहारी ॥ॐ॥५॥
अखिल विकार विभंजति, मंजति मन नीका ॥
निगमांगम नवनीत, सु, गिर प्राकृत टीका ॥ॐ॥६॥
ब्रह्म विचार प्रदायिनि, पर वैराग्य प्रदा ॥
सफल करत नर तन को, सोचत सरति सदा ॥ॐ॥७॥
धारण करत बुद्धि को, ब्रह्म निष्ठ करती ॥
नारायण निश्चय ही, मुक्ति महल धरती ॥ॐ॥८॥

– सन्त कवि नारायण दासजी पुष्कर

अथ शान्ति पाठ

ॐ सर्वे भवन्तु सुखिन : सर्वे सन्तु निरामया: ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दु:खभाग्भवेत् ॥
तन मन निर्मल आत्मा, सब काहू की होय ।
दादू विषय विकार की, बात न बूझै कोय ॥
नाम लेत नवग्रह टलैं, भजन करत भय जाय ॥
जगजीवन अजपा जपै, सब ही विघ्न विलाय ॥

ब्रह्मा मुरारी त्रिपुरान्तकारी, भानु: शशि: भूमिसुतौ बुधश्च ।
गुरुश्च शुक्र: शनिराहुकेतव:, सर्वे ग्रहा: शान्तिकरा भवन्तु ॥
ओऽम् सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै ।
तेजस्विनावधीतमस्तु मा कश्चिद् विद्विषावहै ॥
ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं, पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय, पूर्णमेवावशिष्यते ॥

ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति: